बिटिश उपनिवेशवाद के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं बौद्धिक तत्व

प्राप्तिः 22.05.2021
स्वीकृतः 16.06.2021

विकास गर्ग
एस ए एफ भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद
नई दिल्ली
ईमेलः 1972vikasgarg@gmail.com

सारांश

पश्चिमी यूरोप के राष्ट्रों में सोलहवीं शताब्दी के उतरार्ध से अठारहवीं शताब्दी के मध्य तक शक्तिशाली राजतंत्रीय राष्ट्रीय राज्यों का उदय हो रहा था। जिसके कारण राजनीतिक संगठन, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रवाद, जैसे विचार उत्तरोत्तर शक्तिशाली होते जा रहे थे। यूरोपीय राज्यों में ब्रिटेन ने सामूहिक शक्ति की अजेयता के चलते साम्राज्य विस्तार और औपनिवेशिक होड में सर्वाधिक लाभ प्राप्त किया। अतः साम्राज्यवाद के एक मॉडल के रूप में उसका अध्ययन किया जा सकता है। साम्राज्य विस्तार की प्रतियोगिता में ब्रिटेन सबसे आगे रहा। अपने चरम में यह पृथ्वी को एक चतुर्थांश पर फैल गया था। प्रत्येक जांति, प्रत्येक धर्म एवं सभ्यता के समाज उनके साम्राज्य में सम्मिलित थे। इसने सोलहवीं शताब्दी में स्पेन की, सतरहवीं शताब्दी में नीदरलैण्ड की, अठारहवीं सदी में फ्रांस की और बीसवीं शताब्दी में जर्मनी की चुनौती का सामना किया था।

प्रस्तावना

पश्चिमी यूरोप के राष्ट्रों में सोलहवीं शताब्दी के उतरार्ध से अठारहवीं शताब्दी के मध्य तक शक्तिशाली राजतंत्रीय राष्ट्रीय राज्यों का उदय हो रहा था। जिसके कारण राजनीतिक संगठन, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रवाद, जैसे विचार उत्तरोत्तर शक्तिशाली होते जा रहे थे। यूरोपीय राज्यों में ब्रिटेन ने सामूहिक शक्ति की अजेयता के चलते साम्राज्य विस्तार और औपनिवेशिक होड में सर्वाधिक लाभ प्राप्त किया। अतः साम्राज्यवाद के एक मॉडल के रूप में उसका अध्ययन किया जा सकता है। साम्राज्य विस्तार की प्रतियोगिता में ब्रिटेन सबसे आगे रहा। अपने चरम में यह पृथ्वी को एक चतुर्थांश पर फैल गया था। प्रत्येक जाति, प्रत्येक धर्म एवं सभ्यता के समाज उनके साम्राज्य में सम्मिलित थे। इसने सोलहवीं शताब्दी में स्पेन की, सतरहवीं शताब्दी में नीदरलैण्ड की, अठारहवीं सदी में फ्रांस की और बीसवीं शताब्दी में जर्मनी की चुनौती का सामना किया था।

अमेरिका की क्रान्ति से पूर्व ब्रिटेन की नीति यह रही कि बड़े–बड़ भू क्षेत्रों को अधिकार में कर ले।

उन्नीसवीं शताब्दी में जो दूसरा सोपान था, उसमें ब्रिटेन ने छोटे–छोटे क्षेत्रों जो बहुधा द्वीप थे, एकाधिकार कर लिया, इनका उपयोग महत्वपूर्ण मार्ग बनाने के लिये आरम्भिक कदम के रूप में होता था।

उपनिवेशों से ब्रिटेन को पर्याप्त मात्रा में आवश्यक श्रम शक्ति, कच्चा माल और विस्तृत बाजार उपलब्ध हुए। ब्रिटेन अन्य यूरोपीय राष्ट्रों की प्रतिद्धंद्विता में विजयी रहा, इसके पृष्ठाधार कई सांस्कृतिक, सामाजिक और बौद्धिक तत्व रहे थे। जैसे ब्रिटेन में कृषि दासता प्रणाली और श्रेणी व्यवस्था समकालीन यूरोपीयन राष्ट्रों की तुलना में शीघ्र ही समाप्त हो गई थी। 1688 ई0 की शानदार क्रान्ति के उपरान्त ब्रिटिश संविधान जिन सुदृढ़ सिद्धान्तों पर आधारित किया गया, उनसे ब्रिटेन में शान्ति बनी रही।[1]

सोलहवीं, सतरहवीं और अठारहवीं शताब्दी में हुये परिवर्तनों के माध्यम से ब्रिटेन में पूंजीवादी समाज का निर्माण हुआ। इन परिवर्तनों ने सामंती व्यवस्था को पहले व्यापारिक और मौद्रिक व्यवस्था वाले समाज में भी परिवर्तन किया और फिर औद्योगिक पूंजीवाद में। इस मध्य आर्थिक संगठन, सामाजिक वर्गों और सरकार के रूपों में परिवर्तित हुआ। यूरोपीय अर्थव्यवस्था के नवीन क्षितिजों में विस्तार से औपनिवेशिक साम्राज्यों का निर्माण हुआ। साथ ही साथ नवीन सामाजिक अभिवृत्तियों, सांस्कृतिक पैटर्न और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हुआ।[2]

जूल्श मिशिले (प्रसिद्ध फ्रेंच इतिहासकार) ने इस परिस्थिति की नवीनता के दो आयामों दुनिया की खोज और मनुष्य की खोज को स्पष्ट किया है। अनजान भूभागों की खोज से विश्व का भौतिक और भौगोलिक विस्तार हुआ। बारूद की खोज ने युद्ध की प्रकृति पूर्णतया परिवर्तित कर दी। इसने यूरोपियनों को शक्तिशाली हथियारों से लैस कर दिया। जिनकी सहायता से यूरोपियनों ने नई और पुरानी दुनिया को सफलतापूर्वक अपने आधीन कर लिया। पश्चिम की ओर कोलम्बस और पूरब की ओर वास्कोडिगामा द्वारा किये गये अभियान से नवीन समुद्री मार्गों की सफल खोज ने विश्व के दूरदराज के क्षेत्रों में भविष्य के औपनिवेशिक साम्राज्यों के निर्माण का मार्ग प्रशस्त हुआ। नवीन खगोलीय उपकरणों की खोज, प्राकृतिक घटनाओं की परम्परागत व्याख्याओं के स्थान पर नवीन वैज्ञानिक विचारों का क्रमिक विकास हुआ था।[3] ब्रिटेन का नव धनाढ़य वर्ग परम्परागत भूस्वामी वर्ग से भिन्न पूंजी निवेश करने की मानसिकता से युक्त था। वहीं प्यूरिटन और मैथडिस्ट आन्दोलन ने मितव्ययता और बचत के मूल्यों को समर्थन दिया था। अतः मात्र कुलीन वर्ग ही नहीं अपितु व्यापारियों की भी संख्या अच्छी खासी थी। जो लाभार्जन की लालसा में नवीन उत्पादन विधियों को अपनाये जाने को उत्सुक थे। जेम्स वाट, आर्क राइट, कार्ट राईट और क्रोम्पटन इत्यादि कई आविष्कारकों ने नवीन तकनीकें उनको प्रदान की, ब्लेक डेथ ने नगरों में श्रमिक जनसंख्या की वृद्धि की। बैंकिग प्रणाली का एक दृढ़ आधार अठारहवीं शताब्दी के ब्रिटेन में निर्मित होने की प्रक्रिया में था। जिनके मिश्रित परिणाम स्वरूप औद्योगिक क्रान्ति घटित हुई थी।

उपनिवेशवादी प्रत्यक्ष राजनीतिक वर्चस्व की स्थापना में, सांस्कृतिक वर्चस्व की स्थापना के प्रयासों की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही थी। इसके अतिरिक्त उग्र राष्ट्रवाद और श्रेष्ठता का अहंकार, उपनिवेशवाद का एक सांस्कृतिक वैचारिक एक पक्ष था। जो समाज और राष्ट्र के प्रत्येक पक्ष में सम्मिलित था। अठारहवीं शताब्दी के प्रसिद्ध ब्रिटिश (स्काटिश) विचारक डेविड ह्यूम ने इसे अभिव्यक्ति देते हुये कहा था। मनुष्य ऐसे प्राणी थे, जिन पर प्रकृति ने पूर्ण कृपा नहीं की थी। वे ऐसे पर्यावरण में रहने को विवश थे जहां उनकी इच्छाएं असीमित थी। जबकि उनकी पूर्ति के साधन सीमित थे। वे स्वभाव से तो सामाजिक थे परन्तु फिर भी उन्हें सर्वप्रथम अपना, अपने परिवार और अपने मित्रों का ख्याल आता था। अतः संसाधनों के वितरण के प्रश्न पर झगड़ा आरम्भ हो गया। अतः सरकार इसलिए जरूरी थी, क्योंकि लोग इतने दूरदर्शी नहीं थे कि वे न्याय के नियमों के पालन में ही अपना हित समझते।[4]

वहीं राजनीति भी उपनिवेशवाद को वैचारिक आधार प्रदान कर रहे थी। अठारहवीं शताब्दी के प्रसिद्ध ब्रिटिश राजमर्मज्ञ एडमंडबर्क (1729–97) ई0 का विचार था। सामाजिक जीवन के क्षेत्र में 'मार्गदर्शन और नेतृत्व' की सर्वथा आवश्यक होती है।[5]

सैन्य विजय उपरान्त, राजनीतिक वर्चस्व स्थापना उपरान्त, उपनिवेशवाद ने भारत में सांस्कृतिक वर्चस्व की स्थापना में 'ज्ञान' को एक प्रमुख उपकरण की भाँति प्रयोग किया। अतः भारत में औपनिवेशिक शासन मात्र सेना, सिविल सर्विस और पुलिस जैसी संस्थाओं के बल पर ही टिकी हुई नहीं थी, विचारधारात्मक प्रभावों से सृजित भ्रम भी उसके लिये एक दृढ़ स्तम्भ का कार्य करता था। औपनिवेशिक प्रशासकों ने उन्नीसवीं शताब्दी में कई बार दोहराया कि उनका उद्देश्य भारत पर यूरोपियन सभ्यता को बलात थोपना नहीं है। अपितु 'स्थिर शासन प्रणाली', विधि का शासन और सम्पत्ति की सुरक्षा आदि की स्थापना था। लार्ड मैकाले ने पाश्चात्य संस्कृति को इन्हीं मूल्यों की प्रतिनिधि घोषित किया। इस भ्रम की सृष्टि में शिक्षा की कल्पना एक प्रभावकारी माध्यम के रूप में की गई।

जिसकी सहायता से अंग्रेजी संस्थाओं और मूल्यों को आदर्श संस्थाओं और मूल्यों के रूप में प्रस्तुत किया गया। औपनिवेशिक सांस्कृतिक विचारधारा का प्रचार–प्रसार क्रम में भारत में अंग्रेजी राज की स्थापना का महत्व व उसकी उपयोगिता का बखान उपनिवेशवादी सांस्कृतिक एवं बौद्धिक तत्व का प्रमुख हेतु थे।[6]

जे0ए0 हाबसन ने अपनी पुस्तक 'इम्पिरियलिज्म ए स्टडी' में ब्रिटिश प्रशासकों द्वारा प्रायः गिराये जाने वाले 'लाभों' (वे लाभ जो औपनिवेशिक शासन के फलस्वरूप भारत ने प्राप्त किये) की निम्न सूची निर्मित की थी। हमने भारत में अपेक्षाकृत स्थायी आन्तरिक शान्ति की स्थापना की है। जैसी सिकन्दर महान के उपरान्त कभी भी स्थापित नहीं हुई थी। हमने न्याय की निष्पक्ष व्यवस्था की है। हमने करों के भार को नियममित किया है और सम्भवतया उसमें कमी की है। हमने देशी शासकों और उनके कर्मचारियों के अत्याचारों और भ्रष्टाचारों को समाप्त किया है। जनशिक्षा हेतु हमने सार्वजनिक स्कूलों और कालेजों की स्थापना की है। बल्कि कई औद्योगिक कलाओं की शिक्षा का प्रबन्ध भी किया है।

सड़कों, रेल और नहरों के जाल बिछा दिये जाने के कारण संचार और यातायात अधिक सुविधाजनक हो गया है। हमारे द्वारा लागू की गई वैज्ञानिक सिंचाई की पद्धति ने भू उर्वरकता में वृद्धि की है। कोयला सोना व अन्य दूसरे खनिज पदार्थों की खदाने विकसित हुई है। आधुनिक मशीनी उद्योग जैसे कपड़ा उद्योग से बम्बई व अन्य दूसरे नगरों के लोगों को रोजगार मिलने में सुविधा हो रही है। चाय, कहवा, नील, पटसन, तम्बाकू और दूसरी महत्वपूर्ण फसलें अब पैदा होने लगी है। हम धीरे–धीरे, दूसरे बहुत से मानवता विरोधी धार्मिक, कुसँस्कारों को तोड़ रहे है। जहां–जहां ब्रिटिश प्रभाव फैला है। वहां–वहां जाति की पद्धति में भी कुछ दरारें आने लगी है।[7]

अतः औपनिवेशिक विचारधारा के प्रचार–प्रसार क्रम में यूरोपियनों ने हिन्दू विश्वासों की भी कटु आलोचना की। यद्यपि उनमें से अधिकांशतः भारतीय परम्परा के प्रति अल्पज्ञान और पूर्वाग्रह युक्त दृष्टिकोण रखते थे। निश्चय ही कई असंगत और अतार्किक कुप्रथाओं के प्रचलन के बाद भी भारतीय जनता के एक बड़े भाग के चरित्र और आचार–व्यवहार का एक उज्जवल पक्ष भी था। 1813 ई0 में ब्रिटिश सदन की समितियों के समक्ष गवाही देने हेतु वारेन हेंटिग्स ने भारतीय का चरित्र इन शब्दों में वर्णित किया था। ब्रिटिश जनों के मन में यह विचार भर देने का पूरा प्रयास किया गया है कि साधारण भारतवासी नैतिकता से पूर्णतया रहित है और वह प्रत्येक ऐसी बुराई और अपराध में लिप्त है। जिससे मानवता पर कलंक लग सकता है। मैं शपथ लेकर यह कह रहा हूं कि भारतीय चरित्र का यह वर्णन पूर्णतया निराधार है भारतीय लोगों के बारे में मेरा यही कहना है कि हिन्दू अत्यन्त विनम्र और दयावान स्वभाव के है और वे अपने प्रति किये गये अन्याय का बदला नहीं लेते। बल्कि यदि उनके साथ कोई भलाई की गई हो तो अत्यन्त आभारी हो जाते है। उनकी आराधना और पूजा के तरीके गंवारों वाले तो है, लेकिन उनकी धार्मिक मान्यताएं इतनी अच्छी और सुन्दर है कि समाज, उसकी शान्ति और व्यवस्था के लिये पूरी तरह उपयुक्त है।[8]

उपनिवेशवाद के सांस्कृतिक और बौद्धिक तत्वों के सन्दर्भ में यह महत्वपूर्ण है कि यदि सामान्य लोग अपनी सामाजिक और व्यक्तिगत परिस्थितियों को निष्क्रिय रहकर स्वीकार करें और उनका नियतिवादी दृष्टिकोण हो तो वह औपनिवेशिक और सामाजिक प्रश्नों पर संघर्ष करने के लिये अनुकूल नहीं होगा। किन्तु वह पूंजीवाद और औपनिवेशिक आधुनिकता के उपनिवेश में विकास के लिये सहायक होगा। विज्ञान, मीमांसा, प्रबोधन (उपयोगितावाद) के युग में ब्रिटेन के फैक्ट्री मालिकों और इंग्लैण्ड के चर्च और पादरियों के द्वारा ऐसा ही दृष्टिकोण प्रचारित किया जाता था।[9] औधोगिक क्रन्ति के परिणाम स्वरूप जिन नवीन विचारधाराओं का जन्म हुआ। एडमस्मिथ और तुर्गों ने 'मुक्त व्यापार' के जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उसके परिणाम स्वरूप 1870 ई0 के उपरान्त यूरोप में साम्राज्यवाद की भावना पुनः प्रबल होने लगी। 1868–1872 ई0 के मध्य इंग्लैण्ड में इम्पीरियल फैडरेशन आन्दोलन का प्रभाव बढ़ने लगा। इस आन्दोलन की मुख्य विचारधारा यह थी कि ब्रिटेन को अपने साम्राज्य को सुरक्षित रखने के लिये प्रत्येक सम्भव प्रयत्न करने चाहिये।

1870 ई0 में आक्सफोर्ड में भाषण देते हुये प्रसिद्ध लेखक रस्किन ने कहा कि ब्रिटेन को शीघ्र, अति–शीघ्र नये उपनिवेश स्थापित करने चाहिये। उसे जहां भी उपयोगी स्थान मिलता है। उस पर अधिकार कर लेना चाहिये, यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो वह स्वयं नष्ट हो जायेगा। फ्रांस के प्रमुख अर्थशास्त्री पाल लेराब्यूल ने 1874 ई0 में एक पुस्तक लिखी, जिसमें उसने यह विचार व्यक्त किया कि उन राज्यों के लिये सभ्यता के उच्च शिखर पर पहुंच चुके है। उपनिवेश स्थापित करना सबसे महत्वपूर्ण कार्य है।[10]

सन्दर्भ ग्रथ

1. डा0 हुक्मचन्द जैन व कृष्ण कुमार माथुर– *आधुनिक विश्व इतिहास,* जयपुर 2007 पृ0 **380–390**
2. अरविन्द सिन्हा – *संक्रान्ति कालीन यूरोप* – दिल्ली–2008, पृ**0 16–17**
3. अरविन्द सिन्हा – वही, पृ0 **16–17**
4. ओ0पी0 गाबा – *राजनीतिक विचारक विश्वकोष,* पृ0 **143**
5. ओ0पी0 गाबा – वही, पृ0 **65–70**
6. के0एन0 पनिक्कर – *औपनिवेशिक भारत में सांस्कृतिक और विचारात्मक संघर्ष,* दिल्ली पृ0 **15–20**
7. जे0ए0 हाबसन– इम्पीरियजिल्म ए स्टडी (तीसरा संस्करण) जार्ज एलन एन विद, लन्दन 1938 पृ0 **287**, उदद्धत– डा0 ताराचन्द– भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास (खण्ड दूसरा) प्रकाशन विभाग दिल्ली, पृ**0 391–393**
8. पी0एन0 चोपड़ा, बी0एन0पुरी, एम0एन0 दास– *भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास,* खण्ड–3, दिल्ली, 1993, पृ**0 93–94**
9. विपिन चन्द्र – *भारत में उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद,* दिल्ली 1996, पृ0 **29–30**
10. हुकम चन्द जैन, कृष्ण चन्द माथुर – वही, पृ0 **365–367**